अंक : 3, सितम्बर 2022

LEISA INDIA

लीज़ा इण्डिया

विशेष हिन्दी संस्करण

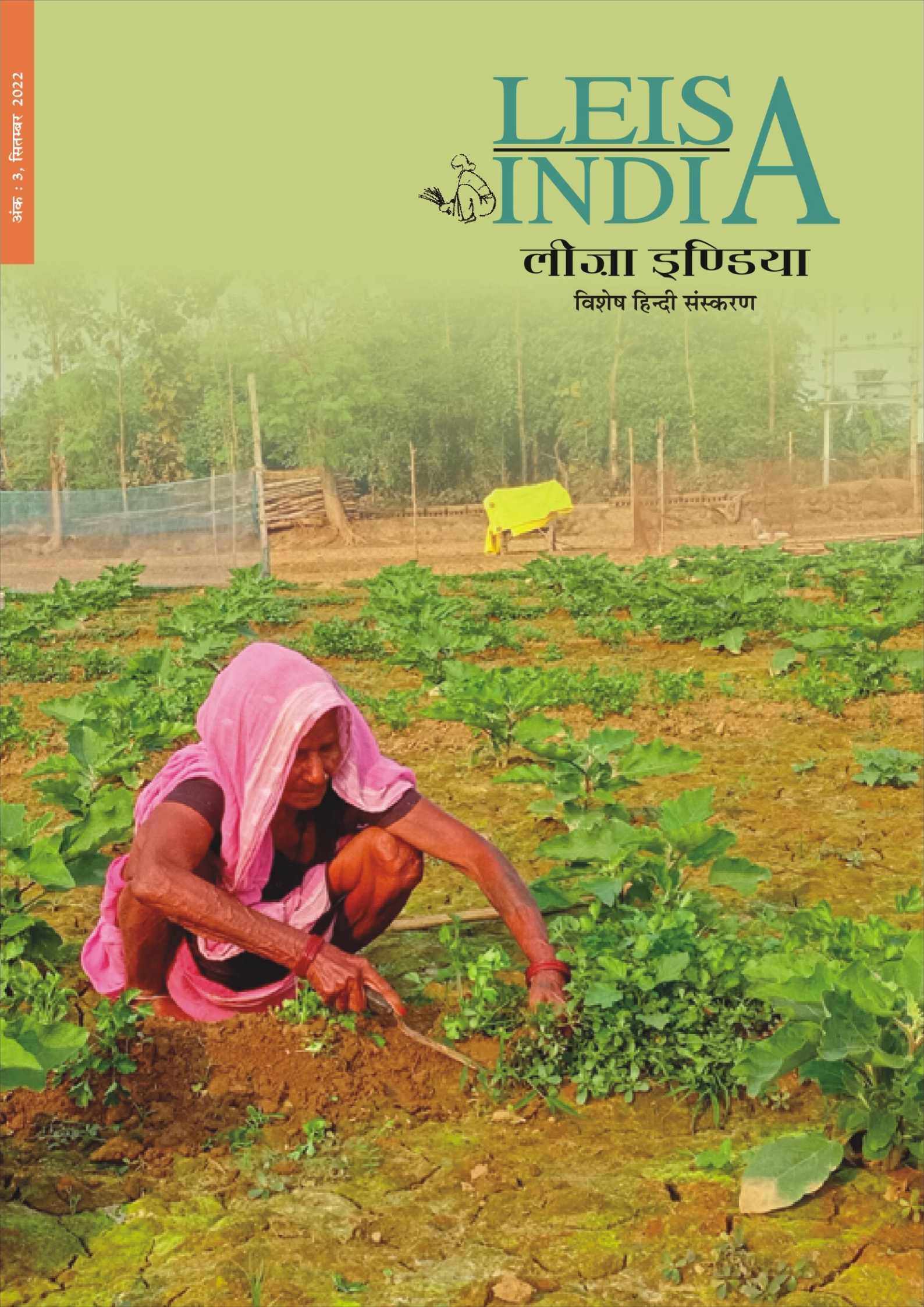

लीज़ा इण्डिया

विशेष हिन्दी संस्करण
सितम्बर 2022, अंक 3

यह अंक लीज़ा इण्डिया टीम के साथ मिलकर जी०ई०ए०जी० द्वारा प्रकाशित किया जा रहा है, जिसमें लीज़ा इण्डिया में प्रकाशित अंग्रेजी भाषा के कुछ मूल लेखों का हिन्दी में अनुवाद एवं संकलन है।

गोरखपुर एनवायरन्मेन्टल एक्शन ग्रुप
224, पुर्दिलपुर, एम०जी० कालेज रोड,
पोस्ट बाक्स 60, गोरखपुर- 273001
फोन : +91-551-2230004,
फैक्स : +91-551-2230005
ईमेल : geagindia@gmail.com
वेबसाइट : www.geagindia.org

ए.एम.ई. फाउण्डेशन
नं० 204, 100 फीट रिंग रोड, 3rd फेज़, 2nd ब्लाक,
3rd स्टेज, बनशंकरी, बैंग्लोर- 560085, भारत
फोन : +91-080-26699512,
+91-080-26699522
फैक्स :+91-080-26699410,
ईमेल : leisaindia@yahoo.co.in

लीज़ा इण्डिया
लीज़ा इण्डिया अंग्रेजी में प्रकाशित त्रैमासिक पत्रिका है, जो इलिया की सहभागिता से ए.एम.ई. फाउण्डेशन बैंग्लोर द्वारा प्रकाशित होती है।

मुख्य सम्पादक
के.वी.एस. प्रसाद, ए.एम.ई. फाउण्डेशन

प्रबन्ध सम्पादक
टी.एम.राधा., ए.एम.ई. फाउण्डेशन

अनुवाद समन्वय
अर्चना श्रीवास्तव, जी.ई.ए.जी.
बी.एम. संजना, ए.एम.ई. फाउण्डेशन

प्रबन्धन
रूक्मिणी जी.जी., ए.एम.ई. फाउण्डेशन

लेआउट एवं कवर डिजाईन
राजकान्ती गुप्ता, जी.ई.ए.जी.

छपाई
कस्तूरी ऑफसेट, गोरखपुर

आवरण फोटो
जी०ई०ए०जी०

लीज़ा इण्डिया पत्रिका के अन्य क्षेत्रीय सम्पादन
तमिल, कन्नड़, उड़िया, तेलगू, मराठी एवं पंजाबी

सम्पादक की ओर से लेखों में प्रकाशित जानकारी के प्रति पूरी सावधानी बरती गई है। फिर भी दी गई जानकारी से सम्बन्धित किसी भी त्रुटि की जिम्मेदारी उस लेख के लेखक की होगी।

माइजेरियर के सहयोग एवं जी०ई०ए०जी० के समन्वयन में ए०एम०ई० द्वारा प्रकाशित

लीज़ा

कम बाहरी लागत एवं स्थायी कृषि पर आधारित लीज़ा उन सभी किसानों के लिए एक तकनीक और सामाजिक विकल्प है, जो पर्यावरण सम्मत विधि से अपनी उपज व आय बढ़ाना चाहते हैं क्योंकि लीज़ा के अन्तर्गत मुख्यतः स्थानीय संसाधनों और प्राकृतिक तरीकों को अपनाया जाता है और आवश्यकतानुसार ही बाह्य संसाधनों का सुरक्षित उपयोग किया जाता है।

लीज़ा पारम्परिक और वैज्ञानिक ज्ञान का संयोग है, जो विकास के लिए आवश्यक वातावरण तैयार करता है। यह भी मुख्य है कि इसके द्वारा किसानों की क्षमता को विभिन्न तकनीकों से मजबूत किया जाता है और खेती को बदलती जरूरतों और स्थितियों के अनुकूल बनाया जाता है, साथ ही उन महिला एवं पुरुष किसानों व समुदायों का सशक्तिकरण होता है, जो अपने ज्ञान, तरीकों, मूल्यों, संस्कृति और संस्थानों के आधार पर अपना भविष्य बनाना चाहते हैं।

ए.एम.ई. फाउण्डेशन, डक्कन के अर्द्धशुष्क क्षेत्र के लघु सीमान्त किसानों के बीच विकास एजेन्सियों के जुड़ाव, अनुभव के प्रसार, ज्ञानवर्द्धन एवं विभिन्न कृषि विकल्पों की उत्पत्ति द्वारा पर्यावरणीय कृषि को प्रोत्साहित करता है। यह कम लागत प्राकृतिक संसाधन प्रबन्धन के लिए पारम्परिक ज्ञान व नवीन तकनीकों के सम्मिश्रण से आजीविका स्थाईत्व को बढ़ावा देता है।

ए.एम.ई. फाउण्डेशन गांव में इच्छुक किसानों के समूह को वैकल्पिक कृषि पद्धति तैयार करने व अपनाने में सक्षम बनाने हेतु उनके साथ जुड़कर सघन रूप से काम कर रही है। यह स्थान अभ्यासकर्ताओं व प्रोत्साहकों के लिए उनकी देखने–समझने की क्षमता में वृद्धि करने हेतु सीखने की परिस्थिति के तौर पर है। इससे जुड़ी स्वयं सेवी संस्थाओं और उनके नेटवर्क को जानने के लिए इसकी वेबसाईट देखें–(www.amefound.org)

गोरखपुर एनवायरन्मेन्टल एक्शन ग्रुप एक स्वैच्छिक संगठन है, जो स्थाई विकास और पर्यावरण से जुड़े मुद्दों पर सन् 1975 से काम कर रहा है। संस्था लघु एवं सीमान्त किसानों, आजीविका से जुड़े सवालों, पर्यावरणीय संतुलन, लैंगिक समानता तथा सहभागी प्रयास के सिद्वान्तों पर सफलतापूर्वक कार्य कर रही है। संस्था ने अपने 40 साल के लम्बे सफर के दौरान अनेक मूल्यांकनों, अध्ययनों तथा महत्वपूर्ण शोधों को संचालित किया है। इसके अलावा अनेक संस्थाओं, महिला किसानों तथा सरकारी विभागों का आजीविका और स्थाई विकास से सम्बन्धित मुद्दों पर क्षमतावर्धन भी किया है। आज जी0ई0ए0जी0 ने स्थाई कृषि, सहभागी प्रयास तथा जेण्डर जैसे विषयों पर पूरे उत्तर भारत में अपनी विशिष्ट पहचान बनाई है। इसकी वेबसाईट देखें–(www.geagindia.org)

माइजेरियर वर्ष 1958 में स्थापित जर्मन कैथोलिक बिशप की संस्था है, जिसका गठन विकासात्मक सहयोग के लिए हुआ था। पिछले 50 वर्षों से माइजेरियर अफ्रीका, एशिया और लातिन अमेरिका में गरीबी के विरूद्ध लड़ने के लिए प्रतिबद्ध है। जाति, धर्म व लिंग भेद से परे किसी भी मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए यह हमेशा तत्पर है। माइजेरियर गरीबी और हानियों के विरूद्ध पहल करने के लिए प्रेरित करने में विश्वास रखता है। यह अपने स्थानीय सहयोगियों, चर्च आधारित संगठनों, गैर सरकारी संगठनों, सामाजिक आन्दोलनों और शोध संस्थानों के साथ काम करने को प्राथमिकता देता है। लाभार्थियों और सहयोगी संस्थाओं को एक साथ लेकर यह स्थानीय विकासात्मक क्रियाओं को साकार करने और परियोजनाओं को क्रियान्वित करने में सहयोग करता है। स्थिर चुनौतियों की प्रतिक्रिया में माइजेरियर द्वारा अपनी सहयोगी संस्थाओं के साथ किये जा रहे कार्यों को जानने के लिए इसकी वेबसाइट देखें (www.misereor.de; www.misereor.org)

जैविक खेती की ओर बदलाव

रोहन योगेश राउत

खेती बदल रही है। लोग फिर से रसायनिक से पारम्परिक खेती की तरफ बढ़ रहे हैं, परन्तु एक नये अन्दाज़, नये दृष्टिकोण एवं नई चुनौतियों के साथ। चाहे जैविक खेती हो, पुनरूत्पादक हो अथवा शून्य बजट की खेती हो, ये सभी किसानों के बीच इसलिए लोकप्रिय हो रहे हैं, क्योंकि इनके माध्यम से आर्थिक व पर्यावरणीय स्थिरता सामने आ रही है।

अनुक्रमणिका

विशेष हिन्दी संस्करण, सितम्बर 2022

5 जैविक खेती की ओर बदलाव
रोहन योगेश राउत

8 एकीकृत दुग्ध पालन की ओर एक यात्रा
अर्चना भट्ट, रवीन्द्रन एवं अब्दुला हबीब

11 अपशिष्ट को अवसर में बदलना
डॉ ममता कुमारी

14 महामारी के समय में महुआ का मूल्य संवर्धन
योगरंजन, ललित मोहन बाल, दिनेश कुमार एवं आयुषी सोनी

17 वाडी : आजीविका, पोषण और पर्यावरण में वृद्धि का माध्यम
योगेश जी सावन्त, राकेश के. वारियर एवं राजेश बी. कोटकर

एकीकृत दुग्ध पालन की ओर एक यात्रा

अर्चना भट्ट, रवीन्द्रन एवं अब्दुला हबीब

जब विपरीत परिस्थितियों ने उन्हें नयी पहल प्रारम्भ करने के लिए प्रेरित किया तो, बाहरी एजेन्सियों से प्रशिक्षण और सहायता प्राप्त कर उन्होंने अपने सपने को संभव और स्थाई बनाया। लिली मैथ्यूज की कहानी ऐसी ही प्रेरणादायक है। उन्होंने विपरीत परिस्थितियों को अवसर में बदला। दुग्ध उत्पादन में 25 वर्ष पूरा कर चुकी लिली अब इस क्षेत्र में एक आदर्श मॉडल बन चुकी हैं।

अपशिष्ट को अवसर में बदलना

डॉ ममता कुमारी

विकास के क्रम में, आज जब हम ऐसे विकास की बात कर रहे हैं, जो बिना पर्यावरण, लोगों व उनकी आजीविका को नुकसान पहुँचाए हो, तब फर्रूखाबाद के एक छोटे से गाँव में रहने वाले डॉ0 जगदीप सिंह के प्रयासों को नज़रअन्दाज नहीं किया जा सकता। इन्होंने गाँवों को शहरों में बदलते देखा और उसी क्रम में बढ़ते प्रदूषण को भी अनुभव किया। और फिर शुरू हुई अपशिष्ट को अवसर में बदलने की कहानी, जिसके नायक एक नहीं तीन थे– किसान, उसके खेत / फसल और रोजगारी ईट–भट्ठा मालिक।

महामारी के समय में महुआ का मूल्य संवर्धन

योगरंजन, ललित मोहन बाल, दिनेश कुमार एवं आयुषी सोनी

महुआ के फूलों व फलों का मूल्य संवर्धन कर विवेकपूर्ण व व्यावसायिक उपयोग किसानों के लिए एक लाभप्रद उद्यम हो सकता है। बहुत से उत्पादों के अलावा, ग्रामीणों को पता चला कि महुआ के फूलों से सैनिटाइजर भी बनाया जा सकता है, जिससे वे महामारी के समय में आत्मनिर्भर बन सकते हैं।

वाडी : आजीविका, पोषण और पर्यावरण में वृद्धि का माध्यम

योगेश जी सावन्त, राकेश के. वारियर एवं राजेश बी. कोटकर

स्थानीय संसाधनों के उचित उपयोग, कम भूमि के साथ उत्पादक जुड़ाव और जलवायु स्मार्ट अभ्यासों के माध्यम से स्थाई आजीविका के लिए कृषि प्रणाली में बागवानी को एकीकृत करने हेतु ''कृषि– औद्यानिक– वानिकी (वाडी)'' बाएफ संस्था का एक अभिवन मॉडल है। कृषि के मुख्य तत्व के तौर पर बागवानी को शामिल करता यह मॉडल पूरे वर्ष किसानों की बहु आय को सुनिश्चित करता है, जिससे विशेषकर संकट के दिनों में फसल पद्धतियों में मध्यम अवधि में लचीलापन और कम अवधि में बेहतर वापसी होती है।

यह अंक...

सम्पादकीय,

विविधताओं को समेटे लीज़ा इंडिया सितम्बर, 22 का हिंदी विशेषांक आपके समक्ष प्रस्तुत है। आज पूरा विश्व मौसम सम्बन्धी विभिन्न समस्याओं से जूझ रहा है और भारत भी उससे अछूता नहीं है। वर्षा ऋतु में बारिश का न होना और सितम्बर मध्य से निरन्तर बारिश होना प्रकृति के असंतुलन को जता रहा है। ऐसे समय में प्रकृति के सर्वाधिक निकट रहने वाले वर्गों—किसानों, वन आधारित आजीविका पर निर्भर आदिवासी समुदाय, खेतिहर मजदूर आदि की आजीविका पर व्यापक असर पड़ रहा है, जो कहीं न कहीं हमारी आर्थिक सुव्यवस्था, सामाजिक ताना—बाना व पर्यावरणीय संतुलन को प्रभावित कर रहा है। यद्यपि इन परिस्थितियों से निपटने हेतु प्रयास भी किये जा रहे हैं और उसी श्रृंखला में लीज़ा इंडिया की यह पत्रिका प्रासंगिक है।

पत्रिका का पहला लेख "जैविक खेती की ओर बदलाव" है, जिसे रोहन योगेश राउत ने लिखा है। इस लेख में लेखक ने महाराष्ट्र में खेती में आने वाली समस्याओं से निपटने हेतु जैविक खेती की तरफ किसानों की रुचि प्रदर्शित होने की कहानी बताई है। यह भी स्पष्ट किया है कि यद्यपि जैविक खेती में चुनौतियाँ भी बहुत हैं, परन्तु आज समय की मांग है, जैविक खेती और धीरे—धीरे ही सही, सभी को इसे अपनाना होगा। अर्चना भट्ट, रवीन्द्रन एवं अब्दुल्ला हबीब ने लगातार सूखा पड़ने और काजू, सुपारी व काली मिर्च की खेती में कीटों के कारण होने वाली भारी क्षति से निपटने के लिए, लिली मैथ्यूज द्वारा पशुपालन व डेयरी उद्योग को अपनाकर एक सफल महिला उद्यमी बनने की कहानी को बताया और उसे "एकीकृत दुग्ध पालन की ओर एक यात्रा" शीर्षक दिया है।

पत्रिका का तीसरा लेख डॉ० ममता कुमारी ने लिखा है। "अपशिष्ट को अवसर में बदलना" नामक इस लेख में लेखिका ने फर्रुखाबाद जिले में व्यक्तिगत प्रयास से अपशिष्टों से कोयला बनाने एवं ईंट भट्टा मालिकों को आपूर्ति करने की कहानी बताई है। यह भी बताया है कि इससे एक तरफ तो खेतो में अपशिष्ट न जलाने से पर्यावरण प्रदूषण में किसानों का योगदान कम हो रहा है, तो दूसरी तरफ किसानों को कचरे से आय भी हो रही है और कोयला जलाने से होने वाले हानिकारक गैसों के उत्सर्जन को भी कम किया जा रहा है। योगरंजन, ललित मोहन बाल, दिनेश कुमार एवं आयुषी सोनी द्वारा लिखित पत्रिका का चौथा लेख "महामारी के समय में महुआ का मूल्य संवर्धन" है, जिसमे लेखकगणों ने मध्य प्रदेश के टीकमगढ़ जिले में महुआ के फूलों से अनेकानेक खाद्य उत्पाद जैसे— लड्डू, बर्फी, हलवा, स्क्वैश, टॉफ़ी, कैंडी बार आदि सहित सैनिटाइजर बनाने के माध्यम से ग्रामीणों को रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने की कहानी बतायी है।

पत्रिका का अंतिम व पाँचवां लेख "वाडी : आजीविका, पोषण और पर्यावरण में वृद्धि का माध्यम" है, जिसे योगेश जी सावंत, राकेश के. वारियर एवं राजेश बी. कोटकर ने लिखा है। इस लेख में लेखकगणों ने कृषि के साथ वानिकी, औद्यानिक एवं तैयार उत्पादों के प्रसंस्करण के माध्यम से लघु एवं सीमान्त किसानों के आय संवर्धन को बेहतर बताया है।

अंत में, पत्रिका में दिए गए सभी लेखों की उपयोगिता एवं व्यवहार्यता पर आपके विचारों एवं सुझावों की अपेक्षा में।

- **सम्पादक मण्डल**

किसानों के खेत में रसायनिक उर्वरकों के स्थान पर जैविक उर्वरकों का प्रयोग

जैविक खेती की ओर बदलाव

रोहन योगेश राउत

खेती बदल रही है। लोग फिर से रासायनिक से पारम्परिक खेती की तरफ बढ़ रहे हैं, परन्तु एक नये अन्दाज़, नये दृष्टिकोण एवं नई चुनौतियों के साथ। चाहे जैविक खेती हो, पुनरूत्पादक हो अथवा शून्य बजट की खेती हो, ये सभी किसानों के बीच इसलिए लोकप्रिय हो रहे हैं, क्योंकि इनके माध्यम से आर्थिक व पर्यावरणीय स्थिरता सामने आ रही है।

11 वर्षों तक जैविक विधि से खेती करने के अनुभव एवं महाराष्ट्र के चन्द्रपुर जिले के चिमूर तालुका के गोन्डेडा में सीमान्त किसानों के साथ जैविक विधि से 5 वर्षों तक कार्य करने के बाद हमने (जेनेरियस टेक्नालॉजीज प्राइवेट लिमिटेड) ने पिछली खरीफ ऋतु में हमने महाराष्ट्र के भान्दरा जिले के सबसे ज्यादा कीटों के आक्रमण वाले क्षेत्र असगांव गाँव मे अपना हाथ आजमाने का प्रयास किया। खेती के मौजूदा अभ्यासों में बदलाव करना हमेशा आसान ही नहीं होता है। यह 8 किसानों के लिए भी आसान नहीं था। कई दौर की चर्चाओं तथा सफलतापूर्वक धान की जैविक खेती करने वाले किसानों के खेतों का भ्रमण करने के बाद, किसानों के इस समूह का प्रत्येक सदस्य अपने कम से कम एक एकड़ खेत पर जैविक विधि से धान की खेती करने के लिए तैयार हुआ था। किसानों ने आपसी सहमति से ठीक व मध्यम आकार के चावल के दाने वाले धान की प्रजाति **जै श्री राम** की खेती करने का निश्चय किया।

प्रति एकड़ दो टन समृद्ध कम्पोस्ट का प्रयोग किया गया। इसे पशुशाला से निकली खाद एवं खेत से प्राप्त अपशिष्टों में डिकम्पोजिंग कल्चर को मिलाकर तैयार किया गया था। पूरी तरह से, सड़ जाने के पश्चात् इसमें 8 प्रकार के बैक्टीरिया और कवकों को मिलाया गया। बीज उपचार के लिए विभिन्न जैव उर्वरकों का प्रयोग किया गया था। ढैंचा का प्रयोग हरी खाद के रूप में किया गया। कीटों को भगाने के लिए दशपर्णी अर्क (10 पत्तियों का अर्क), नीम की पत्तियों का अर्क, अग्निअस्त्र (मिर्चा, लहसुन और अदरक का घोल) का उपयोग किया गया एवं धान की खेती के लिए पौध विकास प्रमोटर के तौर पर पार्थेनियम अर्क, जीवाम्रुत, वर्मीवॉश एवं पंचगव्य का उपयोग किया गया।

छोटी जोत पर उर्वरक, कीटनाशकों, श्रम और पूंजी के अधिक उपयोग के साथ सघन खेती करने का यह हमारा पहला अवसर था। हमें अत्यन्त आश्चर्य हुआ कि प्रतिकूल जलवायु परिस्थितियों के बावजूद, हमारे प्रदर्शन प्रक्षेत्रों का प्रदर्शन पड़ोसी किसान के फसलों की तुलना में अधिक संतोषजनक रहा, जबकि उसमें रासायनिक उर्वरकों का

उपयोग किया गया था। किसानों को फसलों पर कीटों के प्रकोप में कमी और रोग प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि देखने की मिली और अन्ततः धान की उत्पादकता में सुधार हुआ।

सभी 8 किसानों को जैविक खेती करने के पहले वर्ष ही बेहतर उपज प्राप्त हुई। रासायनिक तरीके से की गयी खेती से जहाँ इन्हें 2–4 कुन्तल प्रति एकड़ उपज मिलती थी, वहीं जैविक विधि से इन्होंने प्रति एकड़ 9–11 कुन्तल धान की उपज प्राप्त की। ध्यान देने की बात यह भी रही कि इस वर्ष प्रतिकूल जलवायुविक परिस्थितियों के कारण रासायनिक उर्वरकों से की गयी खेती से प्राप्त उपज में और भी कमी आयी। सामान्यतः उस विशिष्ट क्षेत्र में रासायनिक विधि से की गयी खेती में अच्छी प्रजाति होने पर प्रति एकड़ 15–16 कुन्तल़ उपज मिलती है।

किसान बहुत खुश थे, क्योंकि एक तरफ तो उन्हें रासायनिक विधि से उगायी गयी फसलों के सापेक्ष अधिक उपज प्राप्त हुई, तो दूसरी तरफ उस उपज का उन्हें बाजार मूल्य भी अधिक प्राप्त हुआ। साथ ही उत्पादन लागत में भी 50 प्रतिशत तक कमी आयी। कहीं–कहीं तो लागत में कमी का यह प्रतिशत और भी कम हो गया था। उन्होंने पिछले वर्ष की अपेक्षा अधिक बचत किया और पिछले वर्ष की तुलना में अधिक प्राप्त भी किया।

एक कृषि उद्यमी के रूप में जैविक खेती को प्रोत्साहन देने का यह एक छोटा सा उदाहरण है।

सहयोगी नीति

जिला / तहसील स्तर पर कृषि विभाग और कृषि तकनीक प्रबन्धन अभिकरण (आत्मा) सहभागी गारण्टी योजना के माध्यम से जैविक खेती को प्रोत्साहन दे रही हैं। जैविक खेती के लिए आवश्यक सभी निवेशों को तैयार करने हेतु किसानों को प्रशिक्षित किया जाता है। आत्मा में भी आवश्यक सामग्रियों जैसे– 200 लीटर का ड्रम, वर्मी कम्पोस्ट इकाई आदि को अनुदानित दर पर उपलब्ध कराने का प्रावधान है। किसान समूहों एवं महिला स्वयं सहायता समूहों को एचएएनपीवी उत्पादन एवं ट्राइको कार्ड तैयार करने पर प्रशिक्षित किया गया। इन सभी प्रयासों के साथ, बहुत से किसान उत्पादक संगठन एक पंजीकृत जैविक उत्पादक समूह के तौर पर कार्य कर रहे हैं। नागपुर जिले में, विपणन पहल के तौर पर किसानों के सामानों को बेचने के लिए मुख्य स्थानों को चिन्हित करने हेतु कृषि विभाग और नगर निगम मिलकर कार्य कर रहे हैं, जिसे किसानों के लिए एक कमजोर कड़ी माना जाता है।

राष्ट्रीय स्तर पर मैनेज (एमएएनएजीई), हैदराबाद एवं आईआईएफएसआर, मोदीपुर जैसे संस्थान अपनी प्रसार प्रणालियों के माध्यम से अध्ययन करने, आँकड़े एकत्र करने और जैविक खेती को प्रोत्साहित करने का काम कर रहे हैं। जैविक खेती में प्रमाणित कृषि सलाहकार (सीएफए) उन नवीन पाठ्यक्रमों में से एक है, जो पूरे देश में जैविक सलाहकारों का एक दल तैयार कर रहा है। यह प्रमाणित कृषि सलाहकार भविष्य में जैविक खेती के प्रसार में सहायक होंगे।

प्रसार के प्रत्येक स्तर से किये जाने वाले नवाचार निश्चित रूप से किसानों को जिम्मेदार तरीके से खेती करने में मदद कर रहे है। किसानों तक सूचना का प्रवाह नियमित रूप से निश्चित अन्तराल पर होता है। जैव उर्वरक जैसे

जैव निवेशों के उपयोग से किसान बेहतर उपज प्राप्त कर रहे हैं

मैं जैविक विधि से खेती करने वाले किसानों से हमेशा कहता हूं कि वे अपने पड़ोसी किसान को जैविक खेती करने के लिए तैयार करें। उसे उन लाभों के बारे में बतायें, जिसे आपने अनुभव किया है। यदि वह आपकी बात सुनता है और आपका अनुसरण करता है तो आपको बहुत से अप्रत्यक्ष लाभ होंगे और आप प्रसन्न रहेंगे। यदि वह आपकी बात नहीं सुनता है तब भी आप प्रसन्न रहेंगे। क्योंकि उसके द्वारा उपयोग किये जाने वाले रसायनों के कारण कीट–पतंगे और रोग–व्याधि आपके खेत/फसल के बजाय उसके खेत/फसल की ओर आकर्षित होंगे।

– लेखक

निवेश बाजार में आसानी से उपलब्ध होते हैं और जब बाजार में नहीं मिलते हैं तो इसे आसानी से बाहर से मंगाया जा सकता है।

चुनौतियां

जैविक खेती को एक सुनियोजित गतिविधि के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए। जैविक खेती मूल रूप से कृषि के लिए एक उपचारात्मक दृष्टिकोण है। जैविक खेती प्रारम्भ करने से पहले फसल उत्पादन से लेकर उत्पाद के विपणन तक सम्पूर्ण प्रक्रिया को समझने के लिए धैर्य की आवश्यकता होती है।

जैविक खेती को अपनाने हेतु सरकारी प्रणाली पर्याप्त ध्यान दे रही है, फिर भी किसान बहुत धीमी गति से जैविक खेती करने की ओर अग्रसर हो रहे हैं। इसके पीछे कुछ कारण निम्नवत् हैं–

- रासायनिक खेती ने किसानों की मानसिकता को ''रेडीमेड और तेज'' में बदल दिया है। जैविक खेती में किसानों को अपना उर्वरक एवं कीटनाशक, फंगीसाइड आदि निवेश तैयार करने के लिए स्वयं मेहनत करना पड़ता है, जिससे कई लोग हिचकिचाते हैं।
- चूँकि जैविक खेती एक उपचारात्मक दृष्टिकोण है। अतः जैविक खेती की तरफ बदलाव करने के दौरान प्रारम्भ में, छिड़काव जल्दी–जल्दी करना चाहिए। ऐसी स्थिति में कुछ मामलों में छिड़काव करने की संख्या बढ़ सकती है। बहुत बार, इसे किसान करना नहीं चाहते हैं। और एक बार जब संक्रमण या बीमारी नियंत्रण से बाहर हो जाती है, तब लोग कहते हैं कि ''जैविक पद्धति'' सही नहीं है।
- जैविक विधि से खेती करने में रासायनिक विधियों की तुलना में अधिक श्रम की आवश्यकता होती है। और मजदूरों की कमी तथा खेत का रकबा अधिक होना एक समस्या हो जाती है।
- जैविक खेती मॉडल को पशुपालन के साथ शामिल करने से ही लाभ होता है। हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि ''एक उद्योग का अपशिष्ट दूसरे उद्योग के लिए सर्वोत्तम है।'' सभी किसानों के पास जानवर नहीं होते और जैविक विधि से तैयार की जाने वाली तरल एवं ठोस उर्वरकों, कीट नियंत्रकों आदि को तैयार करने के लिए जानवरों के अपशिष्ट जैसे– मूत्र एवं गोबर की आवश्यकता होती है। इसे बाहर से खरीदने से लागत में वृद्धि होती है।

भावी योजना

फसल का चयन करने से पहले, उपज की बिक्री के लिए बाजार की पहचान कर लेनी चाहिए। यदि कोई किसान अपने उत्पाद को एपीएमसी में बेचना चाहता है तो उसे जैविक विधि से खेती करने हेतु अमूल्य प्रयासों को बर्बाद करने की सलाह नहीं दी जाती है। इसलिए यदि हम पहले ही बाजार का निर्धारण कर लें तो आधी लड़ाई तो वैसे ही जीत जायेंगे।

खेती करने से पहले, किसान को जैविक विधि से उत्पादन के विज्ञान को समझना चाहिए। इसलिए जैविक विधि से खेती करने से पहले मृदा, फसल व उपलब्ध संसाधनों का अध्ययन करना अति आवश्यक होता है। कुछ किसानों के अभ्यासों की नकल करने वाले बड़ी संख्या में किसानों को अपने पर्यावरण और उपलब्ध संसाधनों के अनुसार उपचार में आवश्यक बदलाव करना चाहिए। ऐसी स्थिति में यह सलाह दी जाती है कि किसान इन सभी बिन्दुओं का अध्ययन करने के बाद ही पहले एक छोटे से खेत से जैविक खेती की शुरूआत करें, फिर धीरे–धीरे इसका परिक्षेत्र बढ़ायें।

ज्ञान एवं संसाधनों के आदान–प्रदान के लिए समूह बनाना हमेशा लाभकारी होता है। यह किसानों को खरीदने और बेचने की शक्ति भी देता है। एक बात ध्यान में रखने योग्य यह भी है कि यदि हम एक पल के लिए मृदा की सेहत में सुधार, मृदा की जलधारण क्षमता में सुधार, मानव स्वास्थ्य पर पड़ने वाले सकारात्मक प्रभाव आदि अप्रत्यक्ष लाभों को न गिनें, फिर भी जैविक खेती से तैयार उपज का मिलने वाला उच्च बाजार मूल्य सबसे प्रत्यक्ष लाभ है। सबसे पहले किसान को जैविक खेती से होने वाले आर्थिक लाभ के बारे में ही आश्वस्त होना चाहिए। अप्रत्यक्ष लाभ तो उसके लिए एक बोनस के तौर पर हो जायेगा।

इस समय तेज और रेडीमेड दृष्टिकोणों को छोड़ने और आर्थिक व पर्यावरणीय स्थिरता की बदलती आवश्यकताओं के लिए उचित प्रतिक्रिया देना आवश्यक है। इससे खेती में स्थिरता आयेगी और यही आने वाले समय की मांग भी है।

■

रोहन योगेश राउत
पता– 63, मायर ले–आउट, निकट सुदमपुरी
सक्करदारा स्क्वायर, नागपुर– 440009
ईमेल – raut.rohan1@gmail.com

Bio-input for agroecology
LEISA INDIA, Vol. 23, No.1, March 2021

एकीकृत दुग्ध पालन की ओर एक यात्रा

अर्चना भट्ट, रवीन्द्रन एवं अब्दुला हबीब

जब विपरीत परिस्थितियों ने उन्हें नयी पहल प्रारम्भ करने के लिए प्रेरित किया, तो बाहरी एजेन्सियों से प्रशिक्षण और सहायता प्राप्त कर उन्होंने अपने सपने को संभव और स्थाई बनाया। लिली मैथ्यूज की कहानी ऐसी ही प्रेरणादायक है। उन्होंने विपरीत परिस्थितियों को अवसर में बदला। दुग्ध उत्पादन में 25 वर्ष पूरा कर चुकी लिली अब इस क्षेत्र में एक आदर्श मॉडल बन चुकी हैं।

लिली मैथ्यूज, एक सफल डेयरी उद्यमी

लिली मैथ्यूज उन बहुत कम महिलाओं में से हैं, जिन्होंने खराब परिस्थितियों में नयी चुनौतियों को लेने और उनका सामना करने का साहस किया है। जब उनका परिवार खेती में बहुत बड़े नुकसान से जूझ रहा था, उस समय उन्होंने काली मिर्च की खेती में होने वाले नुकसान की भरपाई करने हेतु दुग्ध पालन में अपना हाथ आजमाने की पहल की। लिली मैथ्यूज एक भावुक महिला हैं, जो अब 70 से भी अधिक संकर प्रजाति की दुधारू गायों की स्वामिनी हैं और केरल के वायनाड जिले के मनन्तवड़ी स्थित अपने घर से ही एक सफल डेयरी उद्योग चला रही हैं। लेकिन उनकी यह यात्रा आसान नहीं थी, लक्ष्य को प्राप्त करना सरल नहीं था, परन्तु उन्होंने चुनौती ली और अपने डेयरी उद्योग को स्थापित करने में आने वाले जोखिमों का प्रबन्धन किया।

पहले, लिली और उनका परिवार अपने नौ एकड़ खेत में मुख्य रूप से काली मिर्च और साथ में अन्य दूसरी फसलों जैसे– नारियल, कॉफी, सुपारी, काजू और सब्ज़ियों की खेती करता था। उनकी आमदनी का मुख्य स्रोत काली मिर्च से होने वाली आय थी और वे 40 कुन्तल काली मिर्च की उपज प्राप्त करती थीं। इसके साथ ही नारियल, कॉफी और सुपारी का भी उनकी आय में उल्लेखनीय योगदान था। लेकिन लगभग 26 वर्षों पूर्व, काली मिर्च की फसल का एक बड़ा हिस्सा, क्विक विल्ट (तेजी से मुरझाने) और स्लो विल्ट (धीमी गति से मुरझाने) जैसे बीमारियों से ग्रसित हो गया और काली मिर्च की लताओं को पुनर्जीवित करना बहुत मुश्किल हो गया। वर्तमान में, वे अभी भी मुख्य रूप से करिमुण्डा और पन्नियूर–1 में काली मिर्च की प्रजातियों की खेती करती हैं जबकि वायनन्दन रोग संक्रमण के कारण पूरी तरह नष्ट हो गया। यह परिवार के लिए मुश्किल का समय था। परिवार को भारी वित्तीय बोझ का सामना करना पड़ रहा था, क्योंकि काली मिर्च के साथ–साथ सुपारी की फसल भी बीमारियों के प्रकोप के कारण प्रभावित थी और उसका उपचार नहीं हो सका था। इन नाजुक समयों में, लिली मैथ्यूज ने अपने विश्वास को डिगने नहीं दिया और नुकसान से भरपाई की रणनीति के तौर पर उन्होंने अपने परिवार के सहयोग से एक डेयरी उद्योग खोलने का निश्चय किया। उनके माता–पिता पारम्परिक रूप से पशुपालन और दूध का कार्य करते थे। इसलिए इस अनुभव ने उन्हें इस उद्यम को अपनाने हेतु साहस दिया।

गौशाला की पहल

प्रारम्भ में, लिली मैथ्यूज ने 15 संकर प्रजाति की गायों के साथ एक छोटी डेयरी खोली। इन गायों को उन्होंने कोयम्बटूर से खरीदा था। उनके पति, श्री मैथ्यू मनन्तवडी के एक निजी कॉलेज में लेक्चरर थे, बाद में वे लिली के डेयरी उद्योग में जुड़ गये। काली मिर्च के फसल में रोग संक्रमण के कारण, उन्होंने काली मिर्च के पौधों को सहारा देने के लिए लगाये कुछ वृक्षों को काट दिया और वहाँ पर चारा की खेती करने लगी। यद्यपि, उनके पास दुग्धशाला

का अनुभव था, परन्तु डेयरी को एक उद्यम के तौर पर प्रारम्भ करना उनके लिए बिलकुल एक नयी चुनौती थी। लिली ने स्वयं को एक पूर्ण पशुपालक किसान के तौर पर तैयार करने के लिए बहुत से प्रशिक्षणों में भाग लिया। उन्होंने अपनी इस यात्रा में सरकारी विभागों और अन्य संगठनों से भी सहयोग प्राप्त किया। वर्ष 2008 में, उन्हें पशुपालन विभाग से 10 गायों के लिए सहयोग मिला, इसके बाद दूध वाली मशीन, चारा फसलों की खेती के साथ–साथ पशुशाला का विस्तार करने के लिए भी सहयोग मिला। बाद में, वर्ष 2014 में, इरोड पशु अस्पताल और वेटेनरी कॉलेज, पूकोड से जानवर पालने और दुग्ध उत्पादन का विकास विषय पर इन्होंने प्रशिक्षण प्राप्त किया। इन सभी प्रशिक्षणों से उन्हें अधिक से अधिक आत्मविश्वास प्राप्त करने व डेयरी उद्यम में अपने जुनून को बनाये रखने में सहायता मिली।

वर्तमान में उनके पशुशाला में 70 संकर गायें रहती हैं। पिछले 10 वर्षों से, उनके डेयरी में कुछ बेहतर प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं के सहयोग से दूध निकालने का कार्य ऑटोमेटिक मिल्किंग मशीन द्वारा किया जाता है। इन कार्यकर्ताओं को स्वयं लिली ने डेयरी प्रबन्धन पर प्रशिक्षित किया है। सभी गायों को गुणवत्तापूर्ण भोजन और अपने खेत पर उगाया गया अच्छा चारा के साथ–साथ मिश्रित राशन दिया जाता है, जिसे वह स्वयं विभिन्न कन्सन्ट्रेट और भूसा–दाना को उचित अनुपात में मिलाकर तैयार करती हैं। उन्होंने यह भी साझा किया कि, बहुत आवश्यक होने की स्थिति में, पशुपालन विभाग के अधिकारीगण तत्काल चिकित्सा सहायता के लिए आवश्यक सहयोग भी प्रदान करते हैं।

वर्ष 2018 में, लिली ने एक नयी ऊँचाई को प्राप्त किया। उन्होंने दही, घी, मक्खन, पनीर, छांछ आदि दूध से तैयार होने वाले विविध प्रकार के उत्पादों के उत्पादन हेतु अपने घर कोल्ड स्टोरेज की सुविधा सहित एक मूल्य संवर्धन इकाई का प्रारम्भ किया। पहले, जब वह दूध सोसायटी पर अपने डेयरी का दूध देती थीं, तब उन्हें न्यूनतम रू0 35/– प्रति लीटर की दर से मूल्य प्राप्त होता था, लेकिन मूल्य संवर्धन इकाई की स्थापना के बाद उन्हें प्रति लीटर रू0 55/– प्राप्त होता है। इससे उन्हें दूध और दूध से बने उत्पादों को बेचने से प्रति माह एक अच्छी आमदनी प्राप्त करने में सहायता मिलती है। वर्तमान में, उनके डेयरी फार्म से प्रतिदिन लगभग 700 ली0 दूध का उत्पादन होता है। उनका कहना है कि डेयरी फार्म को सफलतापूर्वक संचालित करने और लाभकारी बनाये रखने के लिए प्रति गाय प्रति दिन कम से कम 20 लीटर दूध आवश्यक है और इससे कम दूध मिलने पर नुकसान की स्थिति बनती है,

गायों को खेत में उगाया गया गुणवत्तापूर्ण भोजन और अच्छा चारा खिलाया जाता है

क्योंकि खर्च बहुत ज्यादा होता है। वह अपने स्वयं के ब्राण्ड ''लिली'' नाम से दूध एवं दूध से तैयार उत्पादों को वायनाड और कुन्नूर जिले में अपने स्वयं के वाहनों एवं दो दुकानों के माध्यम से बेचती हैं। उनके डेयरी फार्म को देखने आने वाले उनके पड़ोसी और अन्य लोग इकाई से सीधे उत्पादों को खरीद सकते हैं। जानवरों के अलावा, वे मुर्गी, बत्तख और हंस आदि भी रखती हैं और निकट भविष्य में वे कुछ बकरी पालने की योजना भी बना रही हैं।

प्रक्षेत्र स्तर पर एकीकरण

अपने डेयरी फार्म की सफलता के साथ, लिली ने खेती के के प्रति भी प्रतिबद्धता को फिर से जगाया और खेती में पुनः जुट गयी। कॉफी, काली मिर्च, नारियल आदि के अलावा, वे विभिन्न सब्ज़ियों की खेती भी करती हैं। धीरे–धीरे वे अपने पूरे खेत को जैविक बना रही हैं। गाय का गोबर और गौमूत्र एकत्र किया जाता है और पूरे खेत के लिए जैविक खाद के तौर पर उपयोग किया जाता है। इसके साथ ही गोबर के पुनर्चक्रीकरण के लिए एक बड़ा गोबर गैस प्लाण्ट भी बन रहा है। गौमूत्र का उपयोग वे कीट प्रबन्धन के लिए करती हैं और लोगों की मांग होने पर बेचती भी हैं। वह आने वाले वर्षों में जैविक उर्वरक जैसे– जीवामृत के उत्पादन का भी एक उद्यम प्रारम्भ करने की योजना बना रही हैं। अपने उद्यम को मूल्य सवंर्धित उत्पादों में विस्तारित करने के साथ–साथ उन्होंने अब पुनः काली मिर्च की खेती करना प्रारम्भ कर दिया है, जिसे कुछ साल पहले अधिक नुकसान होने के कारण खेती करना बन्द कर दिया था।

अगले साल अपने खेत की सिल्वर जुबिली मनाने की तैयारी कर रही लिली गर्व से कहती हैं कि उनका सपना है कि वे अपने डेयरी फार्म में 90 गायें पालें और दूध का उत्पादन बढ़ाकर 1000 लीटर प्रतिदिन कर लें। इस क्षेत्र में उद्योग का प्रारम्भ करने की इच्छा रखने वाले नये लोगों के लिए उनकी सलाह है कि पहले छोटे स्तर पर उद्यम लगायें और व्यक्ति को समुचित प्रशिक्षण लेना चाहिए तथा अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए निरन्तर काम करते रहना चाहिए। अपनी सफलता के साथ, लिली मैथ्यूज, अपने डेयरी फार्म का भ्रमण करने आये अन्य किसानों और छात्रों को सलाह देने हेतु एक मान्यता प्राप्त सन्दर्भ व्यक्ति के तौर पर काम करती हैं। उन्हें अपनी उपलब्धियों के लिए बहुत से अवसरों पर डेयरी वुमन ऑफ द इयर सहित बहुत से राष्ट्रीय और राज्य स्तरीय पुरस्कार मिल चुके हैं। अपने ज्ञान एवं अनुभवों को लोगों के साथ साझा करने के लिए वे द्वारका रेडियो मटोली, मनन्तवडी में एक मुख्य वक्ता के तौर पर भी काम करती हैं।

अपने अतीत को याद करते हुए, लिली साझा करती हैं कि जब हमें अपनी खेती में नुकसान हुआ, तब हमें उस

दूध से विविध प्रकार के उत्पाद तैयार करने हेतु घर पर ही मूल्य संवर्धन इकाई

नुकसान से उबरने के लिए बहुत कर्ज लेना पड़ा, परन्तु जब हमने अपनी पारम्परिक खेती प्रणाली में डेयरी का एकीकरण किया तो आज हमारे पास एक अच्छा घर और एक सफल व्यापार है। उनकी यह यात्रा इस बात का एक उत्कृष्ट उदाहरण है कि अपनी पारम्परिक खेती प्रणाली में पशुधन को शामिल करते हुए फसल आधारित कृषि प्रणाली के तत्वों को बदला जा सकता है और खेती को लाभप्रद बनाया जा सकता है।

■

अर्चना भट्ट
वैज्ञानिक
रविन्द्रन
विकास सहायक
अब्दुल्ला हबीब
विकास सहयोगी
एमएसएसआरएफ–सामुदायिक कृषि जैव विविधता केन्द्र
वायनाड, केरल
ईमेल – archanabhatt1991@gmail.com

Resilient Crop - Livestock System
LEISA INDIA, Vol. 23, No.4, Dec. 2021

फसल अपशिष्ट से तैयार कोयलों के साथ जगदीप

अपशिष्ट को अवसर में बदलना

डॉ ममता कुमारी

विकास के क्रम में, आज जब हम ऐसे विकास की बात कर रहे हैं, जो बिना पर्यावरण, लोगों व उनकी आजीविका को नुकसान पहुँचाए हो, तब फर्रुखाबाद के एक छोटे से गाँव में रहने वाले डॉ0 जगदीप सिंह के प्रयासों को नज़रअन्दाज नहीं किया जा सकता। इन्होंने गाँवों को शहरों में बदलते देखा और उसी क्रम में बढ़ते प्रदूषण को भी अनुभव किया। और फिर शुरू हुई अपशिष्ट को अवसर में बदलने की कहानी, जिसके नायक एक नहीं तीन थे– किसान, उसके खेत/फसल और रोजगारी ईट–भट्ठा मालिक।

जलवायु परिवर्तन एक वैश्विक समस्या है। यह कथन अब बहुत पुराना हो गया है। नयी बात यह है कि इसके दुष्प्रभावों को स्थानीय स्तर पर महसूस किया जाने लगा है। लोग–बाग जानने लगे हैं कि जलवायु परिवर्तन के क्या कारण हैं और हमारा इसमें क्या योगदान है? फिर भी उँचे स्तर की जीवन शैली का मोह कहिए या आजीविका चलाने की जद्दो–जहद! उच्च, मध्यम व निम्न सभी आयवर्ग के लोग जानने व समझने के बावजूद बदलना नहीं चाहते।

हम सभी बखूबी परिचित हैं कि फसल अपशिष्टों को जलाने से एक तरफ तो हमारी मृदा का ह्रास होता है, उसमें मौजूद लाभकारी सूक्ष्म जीवाणु नष्ट हो जाते हैं, तो वहीं दूसरी तरफ वायुमण्डल में भी इसका दुष्प्रभाव पड़ता है। साथ ही आज की चकाचौंध भरी शहरी जीवन शैली अपनाने के क्रम में कंकरीट के जंगल तैयार होते जा रहे हैं, जिसके लिए आवश्यक वस्तुओं में एक– ईंट तैयार करने में पर्याप्त मात्रा में कोयले का उपयोग होता है। विभिन्न अध्ययनों व शोधों से सिद्ध हो चुका है कि ईंट भट्टे और फसल अवशेषों को जलाना, ग्रामीण के साथ–साथ शहरी भारत में भी वायु जल और मृदा प्रदूषण के दो सामान्य स्रोत हैं। ईंट भट्टों से भारी मात्रा में कार्बन मोनोऑक्साइड (CO), कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2), सल्फर डाइऑक्साइड (SO_2), नाइट्रोजन डाइऑक्साइड (NO_2), ब्लैक कार्बन, पार्टिकुलेट मैटर (PM) का उत्सर्जन होता है, जबकि फसल अवशेष जलाने से मिट्टी में 1 सेमी की गर्मी प्रवेश करती है और 33.8–42.2 डिग्री सेल्सियस तक के तापमान में वृद्धि होती है, जो उपजाऊ मिट्टी के लिए महत्वपूर्ण जीवाणु और कवक आबादी को मार देती है। ये पदार्थ और हानिकारक गैसें ग्रीनहाउस प्रभाव और ग्लोबल वार्मिंग में भी बड़ा योगदान करती हैं।

पहल

फोर्ड इण्डिया के साणंद प्लाण्ट में सीनियर मैन्युफैक्चरिंग इंजीनियर के रूप में कार्यरत डॉ0 जगदीप सिंह ने इस समस्या की गम्भीरता को समझा और वर्ष 2017 में नौकरी छोड़कर अपना पूरा समय इस समस्या के समाधान में लगाने का विचार किया जिसकी शुरूआत उन्होंने कनासी (कैमगंज, फर्रुखाबाद, उत्तर प्रदेश) नामक एक छोटे से गाँव से की और वहाँ पर लोगों की सोच में बदलाव लाकर खेती व पर्यावरण को समृद्ध किया।

डॉ0 जगदीप जब भी अपने गाँव कनासी आते, किसानों द्वारा फसल अवशेष जलाने की गतिविधियों से बढ़ते प्रदूषण को देखते समझते, उसके समाधान की बात भी सोचते, परन्तु कुछ परिणाम नहीं निकलता। वर्ष 2018 में उन्होंने गम्भीरता से इस समस्या पर विचार किया और किसानों को फसल अवशेष न जलाने हेतु जागरूक किया, किन्तु यह कार्य इतना आसान नहीं था, क्योंकि श्रम की अनुपलब्धता और उच्च श्रम लागत के कारण किसानों के लिए अपने खेतों की सफाई करना बहुत कठिन था। दूसरे इन्हें फसल अपशिष्टों का प्रबन्धन करने के बारे में भी कोई जानकारी नहीं थी। इसी समय ईंट भट्ठा मालिकों द्वारा किये जा रहे कोयले के प्रयोग से बढ़ने वाले प्रदूषण ने भी इनका ध्यान खींचा और इन्होंने दोनों समस्याओं को मिलाकर उनका समाधान खोजा कि थोड़ी सी तकनीक से एक की जरूरत दूसरा पूरा करेगा और साथ में पैसा भी मिलेगा।

> ईंट–भट्ठा मालिकों की समस्या को निकट से देखने हेतु उन्होंने लगभग 30 ईंटों के खेतों का दौरा किया और उनके मालिकों से मुलाकात की। उनमें से अधिकाँश काले कोयले का उपयोग कर रहे थे जो प्रदूषण का प्रमुख स्रोत है क्योंकि यह CO_2, CO, NO_2, SO_2 और पार्टिकुलेट मैटर्स आदि जैसे बहुत सारे प्रदूषकों का उत्सर्जन करता है।

डॉ. जगदीप सिंह ने अपशिष्टों को अवसर में बदलने माध्यम से दोनों समस्याओं का एक समाधान तलाशा कि यदि किसान अपने खेतों से निकलने वाले फसल अपशिष्टों से कोयला तैयार करें तो ईंट–भट्ठा मालिक उसे खरीद कर अपने भट्ठे में उपयोग करें। इससे एक तरफ जहाँ किसानों को अपने कचरे का अच्छा खासा मूल्य मिल जाता तो दूसरी तरफ भट्ठा मालिकों को स्थानीय स्तर पर ही कोयला की उपलब्धता भी सुनिश्चित हो जाती। परन्तु यह बहुत आसान नहीं था, क्योंकि ईंट–भट्ठा पर काफी बड़ी मात्रा में कोयलों की आवश्यकता होती है तथा दूसरी तरफ किसानों को भी नहीं पता था कि किस तरह से कोयला बनाया जाये।

इस स्थिति से निपटने हेतु सबसे पहले इन्होंने के0वी0के0 जूनागढ़ की विषय विशेषज्ञ डॉ0 ममता कुमारी के साथ सम्पर्क स्थापित कर समाधान हेतु रास्ते तलाशे। तत्पश्चात् इंटरनेट पर काफी शोध के माध्यम से कोयला तैयार करने वाले प्लाण्ट के बारे में समझ बनायी और प्राप्त समाधान के ऊपर किसानों के साथ चर्चा की। और अन्ततः कोयला तैयार करने वाले संयंत्र की स्थापना हेतु आवश्यक उपकरणों की खरीद हेतु इकोस्टैन इंडिया, लुधियाना, पंजाब से सम्पर्क स्थापित किया गया।

रणनीति

संयंत्र खरीदने से पहले यह तय किया गया कि चूंकि इस क्षेत्र में सरसों की खेती बड़े पैमाने पर होती है और सरसों के अपशिष्टों को मवेशी भी नहीं खाते। इसलिए सभी इच्छुक किसान अपने सरसों की फसल के अपशिष्टों को इस संयंत्र हेतु उचित मूल्य पर उपलब्ध करायेंगे और रिकैप कन्सल्टेन्सी के बैनर तले स्थापित संयंत्र पर कोयला तैयार कर उसे ईंट–भट्ठा मालिकों को बिक्री की जायेगी। अपशिष्टों को खेत में न जलाने हेतु पर्याप्त जागरूकता का प्रसार भी कराया गया।

फरवरी 2018 में कोयला बनाने वाले संयंत्र के लिए ऑर्डर दिया गया और वास्तविक प्लांट अप्रैल 2018 के पहले सप्ताह में प्राप्त हुआ। प्लांट ने 8 अप्रैल 2018 को कोयले का उत्पादन शुरू किया था। कोई प्रचार की आवश्यकता नहीं थी क्योंकि माउथ पब्लिसिटी बहुत बड़ी थी। कोयला निर्माण संयंत्र को देखने के लिए बहुत से किसान, ब्रिकेटिंग दलालों और ईंटों के मालिकों ने संयंत्र का दौरा किया था। आज 350 से अधिक किसान इस संयंत्र के माध्यम से कृषि कचरे से धन पैदा कर रहे हैं। अब, फर्रुखाबाद के कैमगंज और मोहम्मदाबाद तहसील के लगभग 70–80 प्रतिशत

ईंट–भट्ठा से निकलता धुंआ

स्वच्छता के सारथी डॉ0 जगदीप सिंह : व्यक्तिगत उपलब्धियां

डॉ. जगदीप सिंह को वर्ष 2021–2022 के लिए श्रेणी–बी में 'स्वच्छता सारथी फैलोशिप' से सम्मानित किया गया है। उन्होंने कृषि अपशिष्ट प्रबंधन पर कई अध्ययन किये हैं। उन्होंने आयात–निर्यात, शिपिंग और फ्रेट फॉरवर्डिंग, मार्केटिंग और डिजिटल मार्केटिंग सहित विविध क्षेत्रों पर 9 पुस्तकें लिखी हैं। डॉ सिंह ने हाल ही में 'एकीकृत विनिर्माण प्रणाली' के लिए एक और अवसर तलाशा है जहाँ कच्चे माल की सभी चीजों का उपयोग किया जाएगा। यह परियोजना ओडीओपी के लिए पीएमएफएमई योजना के समर्थन से प्रक्रियाधीन है जहाँ मूंगफली को कच्चे माल के रूप में उपयोग किया जाएगा।

ईंट भट्टों के मालिकों ने अपशिष्टों से तैयार कोयले का उपयोग करना शुरू कर दिया है।

परिणाम व विस्तार

परिणाम बताते हैं कि फसल अवशेषों को कोयले में बदलने और इन कोयलों के ईंट भट्टों में उपयोग से कार्बन फुटप्रिंट और अन्य हानिकारक ग्रीनहाउस गैसों को कम करने में मदद मिली है, जिससे CO_2 उत्सर्जन में 8.22 मिलियन किलोग्राम, CO उत्सर्जन में 0.34 मिलियन किलोग्राम, NOx उत्सर्जन में 0.028 मिलियन किलोग्राम, SO_2 उत्सर्जन में 0.007 मिलियन किग्रा और पार्टिकुलेट मैटर उत्सर्जन में 0.065 मिलियन किग्रा की कमी आई है। इसने किसान की औसत आय में भी 11.81 प्रतिशत की वृद्धि की है, कोयला तैयार कर बेचने के माध्यम से डॉ0 जगदीप सिंह को 35 प्रतिशत शुद्ध लाभ अर्जित हुआ है, ईंट भट्टों ने श्रम लागत में 13 प्रतिशत की कमी की है, ईंट उत्पादन में 8 प्रतिशत की वृद्धि हुई है, और ईंट भट्टे की कुल आय में 18 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। यह ग्रामीण भारत के लिए पर्यावरण की रक्षा के साथ–साथ कचरे से धन पैदा करने का एक अच्छा समाधान साबित हुआ है।

डॉ0 जगदीप सिंह एवं के0वी0के0 के संयुक्त प्रयासों से इस योजना का विस्तार हो रहा है और इसी कड़ी में वर्ष 2021 में विदिशा, मध्य प्रदेश में एक नये कोयला बनाने के संयंत्र को स्थापित किया गया, जिसमें तकनीकी सहायता डॉ0 जगदी सिंह व डॉ0 ममता सिंह, विषय वस्तु विशेषज्ञ, कृषि विज्ञान केन्द्र जूनागढ़ ने दी।

■

डॉ० ममता कुमारी
विषय वस्तु विशेषज्ञ
कृषि विज्ञान केन्द्र (के.वी.के.) जूनागढ़ कृषि विश्वविद्यालय
पिपलिया, धोराजी, राजकोट, गुजरात– 360410, भारत
ईमेल – mamta.kumari27@gmail.com

Issues and Themes of LEISA INDIA Published in English 2008-2021

V.10, No. 1, 2008 - Towards Fairer Trade
V.10. No. 2, 2008 - Living soils
V.10, No. 3, 2008 - Farming and Social Inclusion
V.10, No. 4, 2008 - Dealing with Climate Change

V.11, No. 1, 2009 - Farming Diversity
V.11, No. 2, 2009 - Farmers as Entrepreneurs
V.11, No. 3, 2009 - Women and Food Sovereignty
V.11, No. 4, 2009 - Scaling up and sustaining the gains

V.12, No.1, 2010 - Livestock for sustainable livelihoods
V.12, No.2, 2010 - Finance for farming
V.12, No.3, 2010 - Managing water for sustainable farming

V.13, No.1, 2011 - Youth in farming
V.13, No.2, 2011 - Trees and farming
V.13, No.3, 2011 - Regional Food System
V.13, No.4, 2011 - Securing Land Rights

V.14, No.1, 2012 - Insects as Allies
V.14, No.2, 2012 - Greening the Economy
V.14, No.3, 2012- Farmer Organisations
V. 14, No.4, 2012- Combating Desertification

V. 15, No.1, 2013- SRI: A scaling up success
V. 15, No.2, 2013- Farmers and market
V. 15, No.3, 2013- Education for change
V. 15, No.4, 2013- Strengthening family farming

V. 16, No. 1, 2014- Cultivating farm biodiversity
V. 16, No. 2, 2014- Family farmers breaking out of poverty
V. 16, No. 3, 2014- Family farmers and sustainable landscapes
V. 16, No. 4, 2014- Family farming and nutrition

V. 17, No. 1, 2015- Soils for life
V. 17, No. 2, 2015- Rural-urban linkages
V. 17, No. 3, 2015- Water-lifeline for livelihoods
V. 17, No. 4, 2015- Women forging change

V. 18, No. 1, 2016- Co-creation to knowledge
V. 18, No. 2, 2016- Valuing underutilised crops
V. 18, No. 3, 2016- Agroecology-Measurable and sustainable
V. 18, No. 4, 2016- Stakeholders in agroecology

V. 19, No. 1, 2017- Food Sovereignty
V. 19, No. 2, 2017- Climate Change and Ecological appraches
V. 19, No. 3, 2017- Ecological Livestock
V. 19, No. 4, 2017- Millet Farming Systems

V. 20, No. 1, 2018- Agroecological Value Chains
V. 20, No. 2, 2018- Biological Crop Management
V. 20, No. 3, 2018- Small Holders Farm Enterprises
V. 20, No. 4, 2018- Agroecological Innovations
Special Issue April 2018- Agroecology- A path towards SDGs

V. 21, No. 1, 2019- Sustainable Aquaculture
V. 21, No. 2, 2019- Recycling resources in agro ecological farms
V. 21, No. 3, 2019- Agroecology- The future of farming
V. 21, No. 4, 2019- Save the planet

V. 22, No. 1, 2020- Special edition- Celebrating 20 years of knowledge on agroecology
V. 22, No. 2, 2020- Digital Agriculture
V. 22, No. 3, 2020- Small farmers and safe vegetable cultivation
V. 22, No. 4, 2020- Agroecology and going local

V. 23, No. 1, 2021- Bio-inputs for agroecology
V. 23, No. 2, 2021- Value addition
V. 23, No. 3, 2021- Healthy Horticulture
V. 23, No. 4, 2021- Resilient crop-Livestock System

सड़क के दोनों तरफ महुआ के वृक्ष

महामारी के समय में महुआ का मूल्य संवर्धन

योगरंजन, ललित मोहन बाल, दिनेश कुमार एवं आयुषी सोनी

महुआ के फूलों व फलों का मूल्य संवर्धन कर विवेकपूर्ण व व्यावसायिक उपयोग किसानों के लिए एक लाभप्रद उद्यम हो सकता है। बहुत से उत्पादों के अलावा, ग्रामीणों को पता चला कि महुआ के फूलों से सैनिटाइजर भी बनाया जा सकता है, जिससे वे महामारी के समय में आत्मनिर्भर बन सकते हैं।

मध्य प्रदेश राज्य के टीकमगढ़ जिले में जंगल के निकट लोगों की रिहाइश है, लेकिन पक्की सड़कों के बढ़ते अतिक्रमण तथा शहरीकरण की उच्च महत्वाकाँक्षा के चलते जंगल के निकट रहने वाले लोगों के जीवन स्तर में कुछ अवाँछनीय परिवर्तन भी हुए। यद्यपि, यहाँ पर परम्परागत तौर पर वनोत्पादों पर आधारित आजीविका लोगों की जीवनशैली का एक हिस्सा रहा है, फिर भी ग्रामीण जीवन में होने वाले इन बदलावों के चलते ये अभ्यास बड़ी संख्या में विलुप्त होने के कगार पर हैं। परिणामस्वरूप लोग जीवन जीने के नये रास्तों को अपनाने लगे हैं। इसके साथ ही लम्बे समय से पड़ने वाले सूखा के कारण भी, यहाँ के लोग आजीविका की तलाश में बड़े शहरों की ओर पलायन करने को मजबूर हुए हैं, क्योंकि ग्रामीण क्षेत्रों में काम मिलना बहुत कठिन हो गया है।

वन विरासत को पुनर्जीवित करना

जिले के अन्दर आने वाला पूरा क्षेत्र पारम्परिक रूप से वन से आच्छादित है और इसमें महुआ, पलाश, टीक एवं तेंदू जैसे आर्थिक महत्व रखने वाले पेड़ों की संख्या बहुतायत में है। महुआ ग्रामीण जनता के लिए आय का एक महत्वपूर्ण स्रोत है, परन्तु परम्परागत रूप से यह शराब का एक प्रमुख स्रोत है और गाँव वाले सिर्फ शराब के रूप में ही इसके उपयोग को जानते थे, जबकि दूसरी तरफ उनके अनुसार तेंदू के पत्तों का उपयोग सिर्फ बीड़ी बनाने में किया जाता है। आय के स्रोत इन महत्वपूर्ण पौधों के अन्य उपयोग के बारे में ये आदिवासी समुदाय जागरूक नहीं थे।

इस क्षेत्र में काम करने वाले एक कृषि वैज्ञानिक डॉ0 ललित मोहन बाल ने देखा कि, ''बहुतायत मात्रा में होने के बावजूद महुआ के फूलों और फलों को एकत्र करने का तरीका बहुत गन्दा था, उचित तरीके से सुखाया नहीं जाता था और उसके भण्डारण का तरीका भी बिलकुल अवैज्ञानिक था।'' उन्होंने कहा कि अवैज्ञानिक तरीके से भण्डारण करने के कारण सूक्ष्म जीवाणुओं की संख्या बहुत अधिक बढ़ जाने से यह केवल शराब बनाने और पशु आहार के लिए ही उपयुक्त रह गये थे। यह भी देखा गया कि प्रसंस्करण के ऊपर ज्ञान व जानकारी का अभाव होने के कारण, महुआ के फूलों की बिक्री में भी परेशानी हो रही थी। इन समस्याओं के ऊपर काम करने के लिए, जैवविविधता परिषद, मध्य प्रदेश सरकार के वित्तीय सहयोग से टीकमगढ़ कृषि कॉलेज ने एक परियोजना शुरू की और सूखे महुआ फूलों की वाँछित गुणवत्ता प्राप्त करने के लिए उपयुक्त शुष्कीकरण (माइक्रावेब और सोलर के माध्यम से सूखाने) तथा संरक्षण की विधियों को मानकीकृत किया।

सोलर और माइक्रावेब के माध्यम से सुखाना आदि विभिन्न पद्धतियों के माध्यम द्वारा महुआ के फूलों को सुखाने के दौरान शुष्कता की विभिन्न विशेषताओं, प्रभावी नमी प्रसार और रंग आदि के ऊपर पड़ने वाले प्रभावों को जानने के लिए कृषि कॉलेज, टीकमगढ़ की उपकरणों से सुसज्जित जैव रसायन प्रयोगशाला में सघन रूप से शोध किया गया। महुआ के सूखे फूलों के भौतिक रसायनिक गुणों का मूल्याँकन मुख्य रूप से नमी की मात्रा, रंग, माप, पुनर्जलीकरण अनुपात और प्रोटीन व कुल शुगर मात्रा को जानने के लिए किया गया। इन सभी अध्ययनों से यह पता चला कि स्थानीय व्यंजनों जैसे– हलवा, खीर, पूड़ी और बर्फी बनाने के लिए महुआ के फूलों को प्राकृतिक मीठे के तौर पर आसानी से परिष्कृत किया जा सकता है। महुआ के सूखे फूलों से विविध प्रकार के खाद्य उत्पादों जैसे– सूखा फूल, कैंडिड फूल, महुआ बार, रेडी–टू–सर्व बेवरेज, स्क्वैश, जैम, लड्डू, केक एवं टाफी आदि तैयार कर ग्रामीणों के समक्ष प्रदर्शित किया गया। प्रयोगशाला में दोहरी आसवन प्रक्रिया के परिणामस्वरूप शराब भी प्राप्त हुई। महुआ से निकलने वाली महक को दूर करने के लिए तुलसी के पत्तों, लेमनग्रास और घृतकुमारी के अर्क का उपयोग किया गया।

कोविड 19 – एक अवसर मिला

कोरोना महामारी और लॉक डाउन की अनिवार्यता ने क्षेत्र के प्रवासियों को घर लौटने पर मजबूर कर दिया। आय का कोई भी स्रोत न होने के कारण, गाँव लौटे इन लोगों की स्थिति बहुत दयनीय हो गयी। इसके अतिरिक्त, बहुत छोटी जोत, खेती के प्रति युवाओं की गम्भीर उदासीनता और पानी सहित संसाधनों की कमी ने समस्याओं को और

महुआ आधारित शराब

भी बढ़ा दिया था। ऐसे समय में यहाँ रोजगार के वैकल्पिक अवसर को तलाशना बहुत आवश्यक हो गया था।

इसी समय कृषि महाविद्यालय, टीकमगढ़ के वैज्ञानिकों और छात्रों के एक दल ने इस गाँव का भ्रमण किया। भ्रमण के दौरान दल ने यह अनुभव किया कि ग्रामवासी सैनिटाइजर के उपयोग के प्रति बिलकुल भी जागरूक नहीं हैं और न ही उन्हें सैनिटाईजर की उपलब्धता हो रही थी। परिणामस्वरूप वे इसका उपयोग भी नहीं कर रहे थें। इसके अलावा, गाँव वापस लौटे लोगों के पास आय का कोई स्रोत न होने के कारण भी उनमें गहरी निराशा थी। इस कठिन समय में, कृषि महाविद्यालय, टीकमगढ़ ने स्थानीय स्तर पर और प्रचुर मात्रा में उपलब्ध महुआ के मूल्य संवर्धन के माध्यम से इन प्रवासियों के लिए आय के स्रोत का एक विकल्प उपलब्ध कराने का प्रयास किया। महाविद्यालय के दल ने न केवल महुआ के वृक्षों की उपयोगिता को खोज कर क्षेत्र में लोगों को आय का स्रोत उपलब्ध कराने हेतु पहल किया, वरन् लोगों को कोविड संक्रमण से बचाने हेतु अल्कोहल आधारित सैनिटाइजर का उपयोग करने के लिए भी जागरूक किया।

महाविद्यालय के शोध दल ने महुआ से सैनिटाइजर बनाने एवं उसके विपणन के माध्यम से ग्रामीण युवाओं को रोजगार का अवसर उपलब्ध कराने में पहल की। इस क्रम में पायलट प्रोजेक्ट के तौर पर गाँव वालों से कुल 300 कुन्तल महुआ की खरीद की गयी और लगभग 60 लीटर महुआ सैनिटाइजर बनाकर गाँव वालों के बीच वितरित किया गया। ग्रामीण युवाओं को 100 मिलीलीटर के बोतल में सैनिटाइजर वितरित किया गया। प्रारम्भ में, गोद लिये गये गाँवों के युवाओं को प्रशिक्षण देने के माध्यम से महुआ आधारित खाद्य उत्पादों और सैनिटाइजरों को लोकप्रिय बनाने और व्यवसायीकरण करने का काम किया गया। सूखे महुआ को बहुत दिनों तक सुरक्षित बनाये रखने में प्रयोगशाला से भी मदद मिल रही है और इसलिए महुआ का नुकसान बहुत कम हो रहा है और इसकी उपलब्धता पूरे वर्ष बनी रहती है।

प्रभाव

अब गाँव के लोग सैनिटाइजर के महत्व को समझने लगे हैं और जागरूक हो गये हैं कि यह उनके आस–पास की चीजों से बना एक सुरक्षात्मक विकल्प है। इसके साथ ही न्यूनतम लागत में स्थानीय स्तर पर उपलब्ध महुआ के फूलों से सैनिटाइजर तथा अन्य मूल्य संवर्धित उत्पाद बनाकर उसका विपणन करना आय का एक बेहतर स्रोत है। बहुत से गाँव वाले न केवल महुआ के फूलों की उपयोगिता की संभावनाएं देख रहे हैं, वरन् वे गिलोय, तुलसी और लेमनग्रास के पौधों को अपने घरों के आस–पास लगाने में भी रूचि दिखा रहे हैं। परियोजना से एक वालण्टियर के तौर पर जुड़े करमरई गाँव के अजय यादव का कहना है कि, महुआ से बनी बर्फी और टाफियों को गाँव के लोग बहुत ज्यादा पसन्द कर रहे हैं।

बड़े शहरों से वापस लौटे युवा, अब न केवल महुआ के फूलों और फलों को एकत्र करने में रूचि दिखा रहे हैं, वरन् महाविद्यालय के दिशा–निर्देशन में महुआ के मूल्य सवंर्धित उत्पादों को बनाना भी सीख रहे हैं। दयाराम अहिरवार का कहना है कि, अगर महामारी की स्थिति में सुधार होता है, तो भी हमारी बाहर जाकर कमाने की कोई योजना नहीं है। ये मूल्य सवंर्धित उत्पाद न केवल हमें अतिरिक्त आमदनी प्रदान करते हैं, वरन् अपने गाँव वापस लौटे किसानों को भी संक्षम और महामारी के समय में आत्मनिर्भर बना रहे हैं।

आज मध्य प्रदेश के टीकमगढ़ जिले में जंगल किनारे रहने वाले आदिवासी परिवारों के लिए महुआ के फूलों से मूल्य संवर्धित खाद्य उत्पाद एवं सैनिटाईजर तैयार कर उनका विपणन करना आय का एक बेहतर स्रोत बन गया है। यह अन्य क्षेत्रों में जंगल किनारे रहने वाले आदिवासी समुदायों के लिए प्रेरणा स्रोत के तौर पर काम कर रहा है और ये समुदाय अपने क्षेत्र में उपलब्ध वन आधारित उत्पादों के मूल्य संवर्धन से आय अर्जन की दिशा में संभावनाएं तलाश रहे हैं।

■

योगरंजन
वैज्ञानिक (बायोटेक्नालॉजी)
ईमेल : yogranjan@gmail.com

ललित मोहन बाल
वैज्ञानिक (पोस्ट हार्वेस्ट तकनीक)
ईमेल : lalit.bal@gmail.com

दिनेश कुमार
वैज्ञानिक (पशु पोषण)
ईमेल : kr.dinesh7@gmail.com
कृषि महाविद्यालय, टीकमगढ़
मध्य प्रदेश– 472001, भारत

आयुषी सोनी
रिसर्च स्कॉलर
कृषि महाविद्यालय, ग्वालियर
मध्य प्रदेश– 474 011, भारत
ईमेल – ayushisoni2351997@gmail.com

Value addition
LEISA INDIA, Vol. 23, No.2, June 2021

वाडी :
आजीविका, पोषण और पर्यावरण में वृद्धि का माध्यम

योगेश जी सावन्त, राकेश के. वारियर एवं राजेश बी. कोटकर

स्थानीय संसाधनों के उचित उपयोग, कम भूमि के साथ उत्पादक जुड़ाव और जलवायु स्मार्ट अभ्यासों के माध्यम से स्थाई आजीविका के लिए कृषि प्रणाली में बागवानी को एकीकृत करने हेतु ''कृषि– औद्यानिक–वानिकी (वाडी)'' बाएफ संस्था का एक अभिवन मॉडल है। कृषि के मुख्य तत्व के तौर पर बागवानी को षामिल करता यह मॉडल पूरे वर्ष किसानों की बहु आय को सुनिश्चित करता है, जिससे विशेषकर संकट के दिनों में फसल पद्धतियों में मध्यम अवधि में लचीलापन और कम अवधि में बेहतर वापसी होती है।

भारत में बहुसंख्य आबादी की आजीविका का मुख्य स्रोत खेती एवं इससे सम्बन्धित क्षेत्र हैं। देश में लघु एवं सीमान्त किसानों की आबादी 82 प्रतिशत है, जिसमें से अभी भी 70 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या अपनी आजीविका के लिए प्रमुख रूप से खेती पर ही निर्भर करती है। खाद्य एवं कृषि संगठन की एक रिपोर्ट के अनुसार, पर्याप्त खाद्य उत्पादन का लक्ष्य प्राप्त करने के बावजूद अभी भी भारत में विश्व की कुल भूखग्रस्त जनसंख्या की एक तिहाई आबादी रहती है और लगभग 190 मिलियन घरों के लोग कुपोषित हैं। भारत में जनजाति समुदायों के लोग इनमें से सबसे अधिक गरीब हैं और यही समाज के सबसे अधिक वंचित समुदाय भी हैं। वर्ष 2018 में, भारत का राष्ट्रीय आँकड़ा यह इंगित करता है कि भारत में जनजाति के लोग सबसे अधिक गरीब व वंचित श्रेणी में आते है।

देश के अधिकाँश किसान छोटी और सीमान्त जोत भूमिधारक हैं और वर्षा आधारित कृषि पर निर्भर करते हैं। कृषि से कम उपज मिलने के कारण परम्परागत संसाधनों का तेजी से कम होना, खराब स्वास्थ्य एवं सेवाओं तक पहुँच का अभाव जैसी बहुत सी चुनौतियां सामने आती हैं, जिससे लोगों को आजीविका चलाने के लिए मजबूरन पलायन करना पड़ता है। मजबूरी में किया गया पलायन निम्न स्तर की जीवन स्थितियों से जुड़ा होता है। अकुशल श्रमिक की श्रेणी में शामिल इन लोगों को न तो रहने के लिए उचित स्थान मिलता है और न ही पर्याप्त पोषण व स्वस्थ जीवन शैली मिलती है, जिससे परिवार का स्वास्थ्य और बच्चों की शिक्षा जैसे महत्वपूर्ण तत्व प्रभावित होते हैं।

सीताराम भाई पूरे वर्ष सब्ज़ी उगाते हैं

आज एक ऐसी वैकल्पिक फसल प्रणाली तैयार करने की त्वरित आवश्यकता है, जिससे स्थाई आजीविका के साथ–साथ प्राकृतिक संसाधनों के स्थाईत्व को भी सुनिश्चित किया जा सके। इस लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु औद्यानिक फसलें जैसे– फल, सब्ज़ियां, फूलों आदि की खेती में काफी संभावनाएं हैं। इस पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए, बाएफ डेवलपमेण्ट रिसर्च फाउण्डेशन (बाएफ) ने वाड़ी कार्यक्रम की शुरूआत की और इसे विस्तारित किया। इस वाडी कार्यक्रम में फलदार वृक्षों को बढ़ावा देने के साथ–साथ अन्य औद्यानिक और वानिकी पौधों को प्रोत्साहन दिया गया। वाडी मॉडल को अपनाने के बाद गरीबी से समृद्धि की तरफ अग्रसर होते एक आदिवासी परिवार की कहानी को इस लेख के माध्यम से साझा किया गया है। वाडी कार्यक्रम से जुड़ने के बाद देश के विभिन्न हिस्सों के लगभग 2 लाख परिवारों की आजीविका, पोषण एवं जीवन की गुणवत्ता में उल्लेखनीय सुधार के परिणाम प्राप्त हुए हैं।

श्री सीताराम भाई सोनजी घाटका दक्षिणी गुजरात के सुदूर आदिवासी क्षेत्र में रहते हैं। वलसाड जिले के काप्रदा प्रखण्ड में सीताराम अपने 6 सदस्यीय परिवार के साथ रहते हैं। मैदानी क्षेत्र से लगा उनके पास 4 एकड़ जमीन

है। उनकी लगभग आधा एकड़ जमीन काफी ढालू है, जिसमें अत्यधिक मृदा क्षरण होता है। उनके परिवार की आजीविका का प्रमुख स्रोत खेती है।

गाँव में अधिकांश परिवारों का मुख्यतः खेती से ही जीवन निर्वाह होता था। उल्लेखनीय है कि केवल मानसून ऋतु में ही खेती होती थी और चावल, बाजरा एवं काला चावल यहां की प्रमुख फसल थी। खरीफ ऋतु की फसल कटाई के बाद अन्य किसानों की भांति सीतारामभाई के पास भी गाँव में आय अर्जन का अन्य कोई स्रोत न होने के कारण वे मजदूरी करने हेतु पलायन कर जाते थे। मानसून ऋतु के बाद पूरे वर्ष में वे काम की तलाश में 3–4 बार वापी, सिलवासा अथवा नासिक चले जाते थे। बार–बार जमीन बंजर रह जाने से मृदा का क्षरण और मृदा उर्वरता का ह्रास हो रहा था। बहुत बार पूरे परिवार की स्वास्थ्य और शिक्षा पर भी व्यापक असर पड़ता था। परिवार के सदस्यों के बीमार पड़ जाने पर चिकित्सा नहीं हो पाती थी साथ ही बच्चों की पढ़ाई भी छूट जाती थी। इन चुनौतियों के बावजूद, क्षेत्र के खेतिहर परिवार इसी पद्धति पर खेती कर रहे थे, जो चिन्ताजनक था।

क्षेत्र की इसी समस्या से निपटने के लिए बाएफ ने क्षेत्र में वाडी कार्यक्रम को प्रारम्भ किया। प्रारम्भिक पायलट परियोजना को नाबार्ड और सुप्रजा फाउण्डेशन द्वारा सहयोग प्रदान किया गया, जिसने कृषि, बागवानी और वानिकी हस्तक्षेपों सहित उपयुक्त खेती प्रणाली मॉडलों को विकसित करने में मदद की। बाएफ ने सुप्रजा फाउण्डेशन के सहयोग से ''समग्र ग्राम विकास कार्यक्रम'' के अन्तर्गत वाडी और विभिन्न औद्यानिक फसलों को आवश्यक मूल्य संवर्धन श्रृंखला हस्तक्षेपों के साथ क्षेत्र में परिचित कराया। इसके परिणामस्वरूप परिवारों की आजीविका में उल्लेखनीय सुधार परिलक्षित हुआ। सीताराम भाई ने वाडी कार्यक्रम के बारे में सुना और इस कार्यक्रम से लाभान्वित हुए अपने कुछ मित्रों और रिश्तेदारों से मिलकर इस कार्यक्रम की खूबियों के बारे में जाना। तत्पश्चात् इस दिशा में कार्य करने का निश्चय किया।

शुरूआत में, वह इस मॉडल की सफलता के प्रति बहुत आश्वस्त नहीं थे, क्योंकि वृक्षारोपण के लिए वह जिस भूमि को छोड़ सकते थे, उसकी ढलान बहुत अधिक थी और भूमि की गुणवत्ता भी बहुत खराब थी। उनके अनुरोध पर, बाएफ टीम द्वारा उनके खेत का भ्रमण किया गया और फिर संयुक्त रूप से एक एक कृषि प्रणाली सुधार योजना तैयार की गयी। उन्होंने सभी आवश्यक श्रम कार्य स्वयं किया और जरूरत पड़ने पर प्रशिक्षणों को लेना भी सुनिश्चित किया। रोपण सामग्री, बेसल उर्वरकों, प्रशिक्षणों और नियमित मार्गदर्शन के रूप में उन्हें सहयोग दिया गया। गढ्ढों की खुदाई, गढ्ढों की भराई, जैविक खादों का उपयोग आदि बहुत से कार्य पौध रोपण से पहले किये गये। सीताराम भाई ने खेत की मेड़ों पर आम के 20 पेड़, 40 पेड़ काजू के और 250 वानिकी पौधों की नर्सरी लगाई। फलदार वृक्षों के बीच में अन्तः फसली के रूप में दलहनी फसलों को लगाया। खरीफ फसल की कटाई के बाद फसल अपशिष्टों से नमी संरक्षित कर अन्तःखेती के रूप में सनई की खेती की गयी। इन अन्तःफसलों से एक तरफ तो

मूल्य श्रृँखला विकास एफ.पी.ओ. की एक मुख्य प्राप्ति थी

प्रमुख विशेषताएं एवं प्रभाव

- स्थानीय संसाधनों के यथोचित उपयोग और उत्पादक जुड़ाव के लिए समग्र अनुकूलित दृष्टिकोण
- बाएफ ने 12 राज्यों में 2 लाख परिवारों तक पहुँच बनायी, जिसे नाबार्ड के साथ मिलकर 5 लाख परिवारों के साथ विस्तारित किया गया।
- परिवार को 80000–90000 की अतिरिक्त आमदनी। पूरे वर्ष आमदनी का होना।
- कोई जबरदस्ती का पलायन नहीं, पोषण, स्वास्थ्य व शिक्षा की स्थिति बेहतर।
- सामाजिक छवि बेहतर हुई है, सशक्तिकरण हुआ है।
- मूल्य श्रृंखला का विकास : 48 एफ0पी0ओ0 के 41000 किसान आम, काजू, आंवला के प्रसंस्करण से जुड़े हैं।
- कार्बन अवशोषित करने की क्षमता : 24 टन प्रति घण्टा

अतिरिक्त आमदनी प्राप्त करने में सहायता मिली तो दूसरी तरफ नाइट्रोजन स्थिरीकरण क्षमता होने के कारण मृदा में सुधार हुआ। गर्मी ऋतु के दौरान, प्रक्षेत्र पर उचित मृदा संरक्षण गतिविधियों को सम्पादित किया गया। उन्होंने खेत से प्राप्त अपशिष्टों का पुनर्चक्रण, हरी खाद, दशपर्णी के अर्क आदि का उपयोग सहित विभिन्न जैविक अभ्यासों को अपनाया। इन सभी अभ्यासों की वजह से मृदा संरक्षण के साथ मृदा सुधार में भी मदद मिली।

बाद में उन्होंने मचान आधारित फसलों सहित सब्ज़ियों की खेती में प्रशिक्षण भी प्राप्त किया। सीताराम भाई ने कभी भी व्यावसायिक आधार पर सब्ज़ियों की खेती नहीं की थी। शुरूआत में उन्होंने बहुत छोटे से खेत में मचान आधारित खेती करना प्रारम्भ किया। जब मचान पर लौकी की खेती की तो उसके नीचे कुछ हरी पत्तेदार सब्ज़ियों को भी लगा दिया। इससे उन्हें एक ही समय में एक ही खेत से 2 से 3 फसलें प्राप्त होने लगीं। पहले साल सब्ज़ियों की खेती से उन्हें सराहनीय लाभ मिला। पहले साल सब्ज़ी की खेती से हुई बचत से इन्होंने अपनी सब्ज़ी की खेती का विस्तार किया और दूसरे काश्तकारों के खेत को बंटाई पर लेकर सब्ज़ी की खेती करने लगे। कुछ वर्षों पश्चात् पौधों के बढ़कर वृक्ष बन जाने के बाद मृदा में भी उल्लेखनीय सुधार हुआ।

शुरूआती वर्षों के दौरान सीताराम भाई को अन्तःफसली के तौर पर दलहन की खेती से कुछ अतिरिक्त आमदनी हो जाती थी। बाद के वर्षों में उन्हें अपनी सब्ज़ी की खेती से आय में उल्लेखनीय वृद्धि हुई। फलदार वृक्षों से उन्हें चौथे वर्ष से आमदनी मिलनी प्रारम्भ हो गयी, जो निरन्तर मिल रही है। पिछले कुछ वर्षों में फलों के उत्पादन में लगातार वृद्धि हुई है। अब सीतारामभाई अनाज, दलहन, सब्ज़ियों, फलों आदि से पूरे वर्ष भर आय प्राप्त कर रहे हैं। हस्तक्षेप के पहले और हस्तक्षेप के बाद उनके खेत के उत्पादों का उत्पादन और मूल्य का एक सार नीचे दी गयी तालिका में दिया जा रहा है–

तालिका 1 : विभिन्न फसलों का उत्पादन और मूल्य

बोयी गई फसलें	वाडी कार्यक्रम के पहले		वाडी कार्यक्रम के बाद	
	उपज (किग्रा में)	मूल्य (रू० में)	उपज (किग्रा में)	मूल्य (रू० में)
अनाज (चावल मोटा अनाज)	1400	3500	1100	27500
दलहन (चना, अरहर)	70	4900	150	10500
लौकी	–	–	15540	217560
खीरा			1000	16000
आम			805	21735
काजू			180	18900
उपज का सकल मूल्य		**39900**		**312195**

कृषि उत्पादन में वृद्धि के फलस्वरूप घरेलू स्तर पर दालों, सब्ज़ियों और फलों की खपत में सुधार हुआ है। परिवार के लोगों को अब अधिक मात्रा में दाल, सब्ज़ियाँ और फल नियमित रूप से मिलने लगे हैं। इससे परिवार स्तर पर पोषण उन्नत करने में मदद मिली है। अपने उपयोग के बाद अधिक हुई सब्ज़ियों व फलों को बेचने से परिवार की आय में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। अब उन्हें आजीविका के लिए जबरन पलायन करने के लिए मजबूर नहीं होना पड़ता है। अब परिवार एक सम्मानजनक जीवन जीने लगा है और बच्चे नियमित रूप से विद्यालय जाने लगे हैं। अन्य हस्तक्षेपों के साथ औद्यानिक फसलों और पेड़ों के कारण मृदा की गुणवत्ता में सुधार हुआ है। परिवार ने यह देखा है कि अब उनके खेत में फसलों के साथ–साथ खेत में आने वाले चिड़ियों व कीट–पतंगों की विविधता में भी वृद्धि हुई है।

सामूहिक पहल

इस क्षेत्र में ऐसे कई अन्य किसान हैं, जो वाडी अर्थात् कृषि –औद्यानिक–वानिकी आधारित कृषि प्रणाली को अपनाये हुए हैं। परिणामस्वरूप कृषि प्रणाली में समग्र परिवर्तन और क्षेत्र के प्राकृतिक संसाधनों में सुधार के कारण कृषि से मिलने वाले लाभ में वृद्धि हुई है। ये किसान किसानों के लिए संगठित निवेश आपूर्ति, कृषि उत्पादों को एकत्र करने, आम और काजू को प्रसंस्कृत करने के साथ–साथ प्रसंस्कृत उत्पादों के विपणन सहित मूल्य का

एक वाडी में विविध प्रकार के फल एवं सब्ज़िया उगायी गयी

श्रृंखला हस्तक्षेपों को सुचारू पूर्वक करने के लिए किसान उत्पादक संगठनों (किसान सहकारी समितियों) के रूप में संगठित हुए हैं। किसान सहकारी समितियों द्वारा इस प्रकार की गतिविधियों को किये जाने के कारण एक तरफ तो उनकी उत्पादन लागत कम हुई है तो दूसरी तरफ उनके उत्पादों का बेहतर मूल्य मिलना भी सुनिश्चित हुआ है। कृषि निवेश आपूर्ति, उत्पादों का एकत्रीकरण, प्रसंस्करण एवं विपणन जैसी गतिविधियों ने क्षेत्र के युवाओं के लिए रोजगार के अवसर प्रदान किये हैं।

कई परिवार फलदार पौधों की नर्सरी / कलम तैयार करना, सब्ज़ियों की नर्सरी तैयार करना, वर्मी कम्पोस्ट बनाना, मशरूम उत्पादन आदि करते हुए द्वितीयक कृषि उद्यमों में विविधता ला रहे हैं। कृषि– औद्यानिक हस्तक्षेपों से न केवल व्यक्तिगत परिवार स्तर पर सकारात्मक प्रभाव पड़ते हैं, वरन् इससे समुदाय स्तर पर रोजगार के अवसर भी तैयार होते हैं। इस पूरे हस्तक्षेप से न केवल परिवारों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति में उल्लेखनीय सुधार हुआ है, बल्कि पर्यावरण में भी सुधार आया है। कार्बन को अपने अन्दर अवशोषित करते हुए वाडी मॉडल जलवायु परिवर्तन को कम करने में भी एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। आज बाएफ का यह वाडी मॉडल गुजरात से बाहर निकल कर पूरे देश में फैल रहा है। छोटी जोत के किसान इस मॉडल को अपनाकर न सिर्फ जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप होने वाले नुकसान को कम रहे हैं वरन् अपने पोषण में भी सुधार कर रहे हैं।

योगेश जी. सावन्त
वरिष्ठ थिमेटिक कार्यक्रम कार्यकारी
ईमेल : ygsawant@baif.org.in

राकेश के. वारियर
मुख्य कार्यक्रम कार्यकारी
ईमेल : rakeshkwarrier@baif.org.in

राजेश बी. कोटकर
वरिष्ठ परियोजना अधिकारी
ईमेल : rajesh.kotkar@baif.org.in
बाएफ डेवलपमेण्ट रिसर्च फाउण्डेशन
बाएफ भवन, डॉ० मणिभाई देसाई नगर,
एनएच 4, वारजे, पुणे– 411058

Health Horticulture
LEISA INDIA, Vol. 23, No.3, Sept 2021